जनहित याचिका के केस

(२००८-२०१४)

माननीय उच्च न्यायालय एवम्

उच्चतम न्यायालय के केसों का संकलन

ECONET

Centre for Social Justice

Lawyers for Change

जनहित याचिका के केस

(२००८–२०१४)

माननीय उच्च न्यायालय एवम्

उच्चतम न्यायालय के केसों का संकलन

ECONET

Centre for Social Justice

Lawyers for Change

जनहित याचिका के केस (२००८–२०१४)

© Centre for Social Justice 2015

Copies : 500

First Edition : October 2015

Compiled by : Reaserch and Capacity Bulding Unit
CENTRE FOR SOCIAL JUSTICE
C-106, Royal Chinmay, Opp. ICO Pump,
Next to Simandhar Tower, Off Judges' Bungalow Road,
Bodakdev, Vastrapur, Ahmedabad - 380054 Gujarat INDIA

Educational material for easy circulation

जनहित याचिका के केस (२००८-२०१४)

उत्तरांचल राज्य बनाम बलवंत सिंह चौफल एवं अन्य, (2010) 3 SCC 402 4

दिल्ली जल बोर्ड बनाम सीवरेज, समवर्गी श्रमिकों और अन्य की गरिमा तथा अधिकारों के लिए राष्ट्रिय अभियान, (2011) 8 SCC 568 7

किशोर समृते बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, (2013) 2 SCC 398 9

अयूबखान नूरखान पठान बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य, (2013) 4 SCC 465 11

मिसेज जी प्रवीना बनाम नरेंद्र मोदी एवं पुलिस निदेशक, गुजरात, (2014) 5 MLJ 421 (मद्रास उच्च न्यायालय) 12

सेंटर फॉर पीआईएल और अन्य बनाम भारतीय संघ और अन्य, (2011) 4 SCC 1 13

ज़ोनल मैनेजर, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बनाम देवी इस्पात लिमिटेड और अन्य, 2011 (1) ALD 22 (SC) 14

एम सुधाकर बनाम वी मनोहरन, (2011) 1 SCC 484 15

राजिन्दर नगर वेलफ़ेयर एसोसिएशन बनाम दिल्ली जल बोर्डऔर अन्य, MANU/DE/0713/2011 (दिल्ली उच्च न्यायालय) 16

जनहित याचिका के केस (२००८-२०१४)

जनहितयाचिका की उपयोगिता तथा दुरुपयोग

उत्तरांचल राज्य बनाम बलवंत सिंह चौफल एवं अन्य, (2010) 3 SCC 402

इस मामले में प्रतिवादीओं ने उत्तरांचल उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर की। याचिका ने उत्तराखंड के एडवोकेटजनरल की 62 की उम्र पर नियुक्ति को चुनौती दी थी। मूल याचिकाकर्ताओं के अनुसार यह नियुक्ति अवैध थी। उनका कहना था कि अनुच्छेद 165 के अनुसार राज्य के राज्यपाल का एडवोकेटजनरल को नियुक्त करने का अधिकार अनुच्छेद 217 में बताया गया है जिसने उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए आयु सीमा अनिवार्य कर रखी थी। उत्तरांचल उच्च न्यायालय ने राज्य सरकार को इस मुद्दे पर फैसला लेने तथा इसका जवाब 15 दिन में देने का निर्देश दिया। उत्तराखंड राज्य ने इस आदेश के खिलाफ अपील दायर करनापसंद किया।

इस मामले के मुख्य मुद्दे थे : (i) क्या अनुच्छेद 217 के तहत आयु सीमा अनुच्छेद 165 के विशेष प्रावधान पर लागू होती है;(ii) क्या उन सवालों, जो पीआईएल के जरिये कोर्ट द्वारा पहले भी संबोधित हो चुके है,को उठाना अदालत की कार्यवाही का दुरुपयोग नहीं है।

सुप्रीम कोर्ट ने याचिका पर ज़ोर देते हुए इस मुद्दे पर स्पष्ट कहा कि अनुच्छेद 217 के तहत आयु सीमा अनुच्छेद 165 पर लागू नहीं होती , जो एडवोकेट जनरल की नियुक्ति के लिए एक विशेष प्रावधान है। सिर्फ एक शर्त जो लागू हो सकती है वह इस अनुच्छेद के खंड (3) में है: “एडवोकेट जनरल को राज्यपाल की इच्छा के दौरान के लिए कार्यभार संभालना होगा....”

कोर्ट के अनुसार, 1950 में पूर्व की एक डिविजन बेंच के फैसले में इस सवाल पर निष्कर्ष दिया जा चुका है, जो बाद में 1962 में सुप्रीम कोर्ट की सैंवधानिक बेंच द्वारा मान लिया गया था। इसके बाद , कई याचिकाओं ने ऐसे समान आधारों पर नियुक्तियों को चुनौती दी है। अदालत ने ऐसे मामलों को यह बताने के लिए प्रयोग में लिया कि कथित रूप से जनहित की आड़ में याचिकाकर्ताओं द्वारा अदालत की कार्यवाही का दुरुपयोग किया जाता है।

अदालत ने भारत में जनहित याचिका के कई पहलुओं पर विचार किया। इसकी उत्पत्ति , विकास तथा विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत रूप से विचार विमर्श किया। इसके अनुसार तीन पहलू थे :ऐसे मामलों पर विचार जो अनुच्छेद21 केतहतऐसे उपेक्षितसमूहोंऔरवर्गोंकेअधिकारों सेसंबंधित होते है जो बेहद गरीब और अनपढ़ होते है तथा जिनसे जुड़े ऐसे विषयों को उन लोगों द्वारा उठाना चाहिए जिनके पास अदालत तक पहुँचने के बेहतर साधन उपलब्ध है ; सुरक्षा, पारिस्थितिकीऔरपर्यावरणकेसंरक्षण से संबंधित मामलों पर विचार करना; और अंततः, शासनमेंईमानदारी, पारदर्शिताऔरअखंडताकोबनाएरखनेकेलिए निर्देशों पर विचार करना तथा उनको जारी करना। अदालत ने इन पहलुओं के तहत बड़ी संख्या में मामलों को ध्यानपूर्वक देखा जिनमे जनहित याचिका के रास्ते को बेहद प्रभावशाली ढंग से लिया गया था। इसके बाद इसने ऐसे मामलों पर ध्यान दिया जिनमे जनहितयाचिकाओंको दायरकरनेकीप्रक्रियाकेलचीलेपनका याचिकाकर्ताओं द्वारादुरुपयोगकियागयाथा।

ऐसे मामलों को देखते हुए , ऐसा विचार बना कि जहाँ जनहितयाचिकाओंने प्रभावीढंगसेकईमामलोंमेंन्यायकेहितोंकीसेवाकीहै, वहीं इसके दुरुपयोग को भी रोकना चाहिए। इसके लिए इसने कुछ दिशा निर्देश तैयार किये:

"(1) अदालत को सही तथा प्रामाणिक जनहित याचिका को प्रोत्साहित करना चाहिए तथा असंगत सोच-विचार के लिए दायर याचिकाओं को हतोत्साहित तथा रोकना चाहिए।

(2) इसके बदले कि हर न्यायाधीश जनहित याचिका पर विचार करने हेतु अपना स्वयं का तरीका तैयार करे , यह ज्यादा सही रहेगा कि प्रत्येक उच्च न्यायालय सही जनहित याचिका को प्रोत्साहित करने तथा टेढ़े मतलब के साथ दायर जनहितयाचिका को हतोत्साहित करने के लिए सही ढंग से नियमों को तैयार करे। इसके फलस्वरूप , हम उन उच्च न्यायालयों से निवेदन करते है जिन्होने अभी तक अपने नियम तैयार नहीं किए है , कि वे तीन महीनों में नियम तैयार करवाये। प्रत्येक उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार जनरल को यह सुनिश्चित करने के लिए निर्देश दिये जाते है कि उच्च न्यायालय द्वारा तैयार नियमों की एक प्रतिलिपि इस अदालत के सेक्रेटरी जनरल को तुरंत भेजे।

(3) प्रथमदृष्टयाकिसी भी जनहित याचिका पर विचार करने से पहले अदालतों को याचिकाकर्ता के परिचय पत्रों को सत्यापित करना चाहिए।

(4) उन्हे प्रथम दृष्ट्या जनहित याचिका पर विचार करने से पहले याचिका की विषय -सूची की यथार्थता के बारे में संतुष्ट हो जाना चाहिए।

(5) अदालत को याचिका पर विचार करने से पूर्व पूरी तरह से संतुष्ट हो जाना चाहिए कि इसमे वास्तविक जनहित शामिल है।

(6) अदालत को सुनिश्चित करना चाहिए कि जिस याचिका में ज्यादा लोक हित, गंभीरता तथा महत्व शामिल है, उन्हे अन्य याचिकाओं के मुक़ाबले अधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

(7) याचिका पर विचार करने से पूर्व अदालत को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि याचिकावास्तविकसार्वजनिकहानि यासार्वजनिकक्षति केनिवारणका उद्देश्यशामिल है। अदालत को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि इस जनहित याचिका को दायर करने के पीछे किसी का व्यक्तिगत फायदा,निजी उद्देश्य या टेढ़ा मतलब नहीं है।

(8) अदालत को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि बाहरीऔरगलतउद्देश्योंकेलिए उपद्रवियों द्वारा दायर याचिकाओं को कठोर शुल्क लगाकर हतोत्साहित किया जाना चाहिए या इस तरह के समान नए तरीकों को अपनाकर ओछी याचिकाओं तथा गलत विचार-विमर्श के लिए दायर याचिकाओं को रोकना चाहिए।"

दिल्ली जल बोर्ड बनाम सीवरेज, समवर्गी श्रमिकों और अन्य की गरिमा तथा अधिकारों के लिए राष्ट्रिय अभियान, (2011) 8 SCC 568

प्रतिवादियों ने अपीलकर्ता के खिलाफ सीवेज श्रमिकों, जो उनके द्वारा काम के लिए नियुक्त किए गए या अनुबंधित है, द्वारा झेले जाने वाली परेशानियों और हालत , तथा सुरक्षा उपकरणों के अभाव में उनकी जिंदगी को खतरे पर ध्यान दिलाने हेतु एक रिट याचिका दायर की।

दिल्ली उच्च न्यायालय की एक डिविजन बेंच ने जनहित के लिए इस याचिका पर विचार किया क्योंकि सीवेज श्रमिक तथा श्रमिकों के कानूनी प्रतिनिधि, जिन्होने सुरक्षा के अभाव में अपनी जिंदगी गंवा दी थी, के पास उच्च न्यायपालिका तक पहुँचने के कोई साधन नहीं थे। कोर्ट ने अपीलकर्ताओं को मृतक श्रमिकों के परिवारों को कांट्रैक्टर द्वारा दी गयी राशि के अतिरिक्त कुछ और राशि देने के निर्देश देते हुए एक वादकालीन आदेश जारी किया।

सुप्रीम कोर्ट के समक्ष, अपीलकर्ता ने अपील में निम्न मुद्दे उठाए: (i) क्या दायर याचिका पर विचार करने में उच्च न्यायालय न्यायसंगत है ;(ii) क्या किसी भी प्रकार से उच्च न्यायालय के आदेश ने राज्य के वैधानिक अधिकार को छीना है ; और (iii) क्या उच्च न्यायालय के पास मुआवजे के भुगतान के लिए वादकालीन आदेश जारी करने का अधिकार था।

कोर्ट ने ऐसी रिट याचिकाओं के कई पूर्व उदाहरणों को ध्यानपूर्वक देखा जो अदालत के अधिकार क्षेत्र से संबंध रखते है,जैसे लोकतान्त्रिक अधिकारों के लिए पीपल्स यूनियन बनाम भारतीय संघ तथा उत्तरांचल राज्य बनाम बलवंत सिंह चौफल। कोर्ट ने अपीलकर्ता के आक्षेप का यह कहते हुए समाधान किया : "...उच्च अदालतें अपने संवैधानिक कर्तव्यों में फेल होंगी यदि वे सामाजिक समूहों , गैर सरकारी संस्थाओं तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा दायर की गयी याचिकाओं पर विचार करने से इनकार करती है जो उन लोगों के हितों का साथ देती है जिनके पास प्रत्येक मनुष्य के पास उपलब्ध बुनियादी अधिकारों का भी अभाव है , संविधान के तहत गारंटीकृत मूलभूत अधिकारों का तो कहना ही क्या। राज्य के हर राजनैतिक और कार्यकारी घटक का यह कर्तव्य है कि प्रत्येक नागरिक तथा प्रत्येक व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा हो तथा हर व्यक्ति गरिमा के साथ जीने के लिए सक्षम हो सके।"

कोर्ट ने दूसरे आक्षेप को भी यह कहते हुए पूरी तरह से खारिज कर दिया कि यह नहीं कहा जा सकता कि उच्च न्यायालय ने वैधानिक सत्ता छीनलीहैतथा इसने सिर्फ यह सुनिश्चित करने की माँग की थी कि

सीवेजश्रमिकोंको जीवनरक्षकउपकरणप्रदानकिए गए है ,और उनके नियोक्ताओं द्वारा वे सुरक्षित है तथा राज्य एवं इसकी एजेंसीओं को उनकी ज़िम्मेदारी को याद दिलाना था।

तीसरे सवाल पर, कोर्ट ने असल में मुआवजे को पर्याप्त से कम पाया तथा अपीलकर्ता को दिल्ली उच्च न्यायालय राज्य विधिकसेवा कमेटी के जरिये पीड़ित परिवार को बड़ी राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया।

किशोर समृते बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, (2013) 2 SCC 398

इस मामले में, अपीलकर्ता ने अमेठी निवासी तीन व्यक्तियों के दोस्त के तौर पर पेश होते हुए हेबिअस कोरपस की रिट हेतु इलाहाबाद उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की। अपीलकर्ता ने दावा किया कि प्रतिवादिओं में से एक प्रतिवादी अमेठी से संसद सदस्य राहुल गाँधी की वजह से तीनों व्यक्ति लगातार अवैध हिरासत में थे , तथा उन्होने (राहुल गांधी) एकलंबेसमयसे सार्वजनिकरूपसेइन तीनव्यक्तियोंकोनहींदेखाथा। इसके बाद की एक रिट याचिका एक अन्य व्यक्ति द्वारा दायर की गयी जिसने इन तीनों व्यक्तियों के दोस्त होने का दावा किया , तथा इसमे कहा गया कि मौजूदा अपीलकर्ता उन कथित व्यक्तियों का दोस्त नहीं था और पूर्व में लगाई गयी रिट याचिका झूठी और दुर्भावनापूर्ण थी। याचिकाकर्ता ने दूसरी याचिका में यह भी दावा किया कि तीनों व्यक्ति पुलिस हिरासत में थे और हेबिअस कोरपस के लिए विनती की। जिस डिविजन बेंच के समक्ष यह मामला आया ने पूर्व याचिका को स्वयं को ट्रान्सफर करवाया तथा पुराने रिकॉर्ड को अगली याचिका में जोड़ा।

डिविजन बेंच ने उत्तर प्रदेश पुलिस के महानिदेशक को अदालत में तीनों व्यक्तियों को पेश करने का आदेश दिया तथा बाद में, महानिदेशक ने उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक व्यक्तिगत शपथपत्र दायर किया। कैद व्यक्तियों में से एक ने पुलिस को कथित तौर पर बताया कि पहली याचिका में याचिकाकर्ता उनका दोस्त नहीं था तथा उसके द्वारा दिये गए सभी बयान पूरी तरह से झूठे थे।

इस बात का पता चलने पर बेंच ने याचिकाकर्ता द्वारा भारी राशि का भुगतान तथा पहली याचिका को बर्खास्त करने का आदेश जारी किया, तथा साथ ही याचिकाकर्ता-अपीलकर्ता के खिलाफ एक मामला दर्ज करने का भी निर्देश दिया। इस पर याचिकाकर्ता ने सुप्रीम कोर्ट के समक्ष अपील करने की सोची।

सुप्रीम कोर्ट के समक्ष एक मुद्दा यह था कि क्या इस मामले को दूसरी बेंच को ट्रान्सफर करने से सामान्य न्यायकेसिद्धांतोंका उल्लंघन होगा तथा क्या यह ट्रान्सफर कानून के अनुसार होगा। दूसरा मुद्दा दोनों याचिकाकर्ताओं द्वारा कानून प्रक्रिया के दुरुपयोग से संबंधित थे। तीसरा मुद्दा यह था कि क्या याचिका दायर करने के लिए याचिकाकर्ताओं के पास जरूरी लोकस स्टैंडाय (हस्तक्षेप करने का अधिकार) था।

सुप्रीम कोर्ट ने पहले मुद्दे में पाया कि याचिकाकर्ता को उचित सुनवाई नहीं देने के अलावा , डिविजन बेंच द्वारा पूर्व की याचिका को खुद को ट्रान्सफर करने की कार्यवाही में भूल हुई थी। विशेष तौर पर ,ट्रान्सफर

का अधिकार कोर्ट के महान्यायाधीश के पास होता है। कोर्ट ने इस पर कहा : "जहाँ विशेष न्याय अधिकार विषय क्षेत्र और अहमियत में बहुत बड़ा है ,जैसे रिट न्याय अधिकार ,वहाँ पर यह अदालतों पर ऐसे अधिकारों कोकाम में लेने के लिए एक बड़ा दायित्व उन पर डालता है , तथा साथ ही अधिक सतर्कता बरतने का सुझाव देता है।"कोर्ट ने निष्कर्ष निकाला कि चूँकि यह सभी शामिल पक्षों को न्यायपूर्ण सुनवाई का मौका दे चुका है, अब आगे इस मुद्दे पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

कोर्ट ने दूसरे मुद्दे पर विस्तृत ढंग से विचार किया। कोर्ट ने दोनों याचिकाकर्ताओं द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष तथ्य सामग्री दबाने तथा कोर्ट को गुमराह करना पाया। इसने पाया कि याचिकाकर्ता कोर्ट के समक्ष निर्दोष ढंग से पेश नहीं आए है। कोर्ट के अनुसार : "यह सुनिश्चित करना कोर्ट का कर्तव्य है कि बेईमानी तथा कानूनी कार्यवाही को दबाने के किसी भी प्रयास को प्रभावी ढंग से रोकना चाहिए , तथा कोर्ट को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि कोर्ट की कार्यवाही के दुरुपयोग से किसी को कुछ भी गलत, अनाधिकृत या अनुचित लाभ नहीं हो रहा हो। इस भावना को रोकने का एक तरीका है उचित यादंडात्मकराशि लागूकरना।"

इन स्थतियों में कोर्ट ने पाया कि जो दोनों याचिकाओं में बतलाया गया है , वह हेबिअस कोरपस का मामला नहीं हो सकता। लोकस स्टैंडाय (हस्तक्षेप करने का अधिकार) के सवाल पर कोर्ट ने कहा कि मूलभूत अधिकार की अपील हेतु याचिका लगाने वाले व्यक्ति का याचिका के नतीजे में खुद के लिए या जो कोर्ट नहीं आ सकता हो उसके लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष लाभ होना चाहिए। आगे , ऐसे व्यक्ति को कानूनी कार्यवाही का दुरुपयोग किए बिना यथार्थ ढंग से पेश आने की आवश्यकता होगी। इसने स्वीकारा कि जनहित में दायर याचिकाओं को कोर्ट स्वीकारती है , याचिकाकर्ता को अभीभीव्यक्तिगतरूपसेयाबड़ेपैमानेपरजनताकेलाभकेलिए, शामिलव्यक्तियोंकेलिएकुछस्पष्टलाभ यासंबंधहोनाचाहिए।हालांकि ऐसे मामलों में ,"याचिकाकर्ता को ऐसे अधिकार का सही तथा सतर्क उपयोग दर्शाना चाहिए।"

सुप्रीम कोर्ट ने अपील के तहत न्यायिक निर्णय में संशोधन किया तथा असाधारण देय शुल्क की योजना में कुछ बदलाव किए।

अयूबखान नूरखान पठान बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य, (2013) 4 SCC 465

अपीलकर्ता ने 1989 में एक समर्थ अधिकारी से एक जाति प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया था जिससे यह प्रमाणित होता है कि वह एक अनुसूचित जाति से संबंध रखता है। इसके बाद अपीलकर्ता इलाहाबाद के म्युनिसिपलकॉर्पोरेशन में एक आरक्षित रिक्त पद के सहारे सीनियर क्लर्क के तौर पर नियुक्त हो गया। जाँच कमेटी द्वारा बाद में प्रमाणपत्र की जाँच हुई तथा कमेटी ने जाति प्रमाणपत्र को भी सत्यापित किया तथा 2000 में एकवैधताप्रमाण पत्र जारी किया। 9 साल बाद, प्रतिवादियों में से एक प्रतिवादी ने कमेटी के समक्ष पेश होकर बताया कि अपीलकर्ता द्वारा प्राप्त प्रमाणपत्र एक गलत प्रस्तुति है।कमेटी ने इस आधार पर प्रार्थना को खारिज कर दिया कि इसे प्रमाणपत्र का खंडन करने का कोई अधिकार नहीं है। कथित प्रतिवादी ने जाति प्रमाणपत्र की वैधता की नए सिरे से जाँच करवाने के निर्देश देने के लिए बंबई उच्च न्यायालय की औरंगाबाद बेंच के समक्ष एक रिट याचिका लगाई। कोर्ट ने सभी पक्षों को ध्यान से सुनने तथा की गई शिकायत पर निर्णय लेने के लिए इस मामले को कमेटी को सौंपा। इस तरह इस अपील को उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ अधिक मान दिया गया।

जो मुद्दा उठाया गया, वह था कि क्या किसी आरक्षित वर्ग से संबंधित नहीं व्यक्ति को जाति प्रमाणपत्र जारी करने को चुनौती देने का अधिकार या लोकस स्टैंडाय है।

सुप्रीम कोर्ट के अनुसार, सिर्फ वह व्यक्ति जो कानूनी नुकसान भुगत रहा है कोर्ट में किसी कार्यवाही को चुनौती दे सकता है, तथा रिट अधिकार क्षेत्र को लागू करने के लिए , वहाँ अमल के लिए एक न्यायिक सुलभ अधिकार मौजूद होना चाहिए। जनहित याचिका के मामले में, यह सुनिश्चित करना कोर्ट सेअपेक्षित है कि उपद्रवी कोर्ट की कार्यवाही का दुरुपयोग नहीं करे। कोर्ट को ऐसे मामलों में जाँच करनी चाहिए कि जनहित याचिका में सही में लोक हित शामिल है।

इस मामले में कोर्ट ने याचिकाकर्ता -प्रतिवादी का व्यवहार सही नहीं पाया तथा उठाया गया मुद्दा किसी लोक हित में नहीं है। कोर्ट ने पाया कि याचिकाकर्ता का व्यवहार कोर्ट की कार्यवाही का दुरुपयोग है और इसलिए उसे इस मामले में आगे से हस्तक्षेप करने से रोक दिया गया।

मिसेज जी प्रवीना बनाम नरेंद्र मोदी एवं पुलिस निदेशक, गुजरात, (2014) 5 MLJ 421 (मद्रास उच्च न्यायालय)

याचिकाकर्ता, एक वकील जिसने बीजेपी के सदस्य होने का दावा किया , ने रिट ऑफ मैंडमस की माँग करते हुए मिस्टर नरेंद्र मोदी को "अपनी पत्नी को वापिस लेने तथा राष्ट्र , महिलाओं और भविष्य की पीढ़ी के सर्वश्रेष्ठ हित में, अपनी पत्नी के रूप में उनके लिए भाषण और अभिव्यक्ति, स्वतंत्रता और बराबरी का दर्जा सुनिश्चित करते हुए उनको सम्मानजनक जीवन प्रदान करने" को निर्देश देने हेतु तथा गुजरात पुलिस निदेशक को यह सुनिश्चित करने के लिए कि मिस्टर मोदी ऐसा करे , अन्यथा उनके खिलाफ कार्यवाही करने के निर्देश देने हेतु मदरा उच्च न्यायालय के समक्ष एक याचिका दायर की। याचिकाकर्ता ने दावा किया कि मिस्टर मोदी की पत्नी एक एकाकीपन जीवन व्यतीत कर रही थी तथा अपने वैवाहिक जीवन के पहलुओं के बारे में किसी से बातचीत ना करने के लिए बाध्य थी।

याचिकाकर्ता के आरोप अखबारों में छपी खबरों पर आधारित थी तथा उन्होने उक्त पुलिस निदेशक को पूर्व में लिखित शिकायत की थी। मद्रास उच्च न्यायालय ने इस मुद्दे को ध्यानपूर्वक देखा कि क्या ऐसी खबरें रिट याचिका का आधार बन सकती है।

सुप्रीम कोर्ट द्वारा कई न्यायिक फैसलों को देखते हुए कोर्ट ने माना कि बिना किसी आधार के अखबार की खबरें सिर्फ सुनी-सुनाई बातों को आधार बनाती है तथा इसलिए इनका कोई महत्व नहीं होता। कोर्ट ने याचिका में किए गए बयानों तथा सहायक शपथपत्रों को निराधार पाया।कोर्ट के अनुसार , प्रत्येक नागरिक को "गोपनियता का अधिकार" है, मतलब "अकेले छोड़ देने" का अधिकार है, और इसलिए अपने परिवार और विवाह की गोपनियता को बचाए रखने का उसे अधिकार है। इस आधार पर, कोर्ट ने याचिकाकर्ता की बात में कुछ विशेष नहीं पाया तथा याचिका को खारिज कर दिया। इसने निष्कर्ष निकाला : "जनहित याचिका के रूप में, [याचिकाकर्ता] को किसी अन्य व्यक्ति के निजी जीवन में झाँकने तथा गलत आरोप लगाने का कोई अधिकार नहीं है, जैसे कि विवाह के विषय में कोई बड़ा अपराध हो गया हो।"

अनुच्छेद 32 के तहत न्यायिक समीक्षा की व्यापकता

सेंटर फॉर पीआईएल और अन्य बनाम भारतीय संघ और अन्य, (2011) 4 SCC 1

2010 में केंद्रीयसतर्कताआयोगअधिनियम, 2003 के तहत एक हाइ पावर्ड कमेटी (एचपीसी) गठित की गई तथा मिस्टर पी. जे. थॉमस को केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त नियुक्त किया गया। सुप्रीम कोर्ट के समक्ष दो रिट याचिकाएं जनहित में दायर की गई जो "नियुक्ति की वैधता के रूप में कानून तथा लोक महत्व के एक जरूरी सवाल " का कारण बनी। याचिकाओं ने मिस्टर थॉमस के खिलाफ चल रही आपराधिक कार्यवाहियों की तरफ ध्यान दिलाया जब वे केरला राज्य में खाद्यएवंनागरिकआपूर्तिविभाग में सेक्रेटरी थे।

मुद्दा यह था की क्या मिस्टर थॉमस की नियुक्ति में किसी प्रकार की अवैधता थी तथा यदि कोर्ट अपने प्रशासनिक विवेक से एचपीसी द्वारा की गई नियुक्ति रद्द करने की एक न्यायिक समीक्षा कर सकती है।

कोर्ट के अनुसार अगर रिट याचिकाओं पर विचार करने पर भी यह सरकार को इसकी पॉलिसी निर्णयों के संदर्भ में जिम्मेदार नहीं ठहरा सकती, लेकिन न्यायिक समीक्षा ने कोर्ट को ऐसे फैसलों की वैधता के लिए सरकार को जिम्मेदार मानने की अनुमति दी है। कोर्ट ने यह माना कि वैसे यह प्रशासनिक विवेक के गुणों की सही समीक्षा नहीं कर सकती पर यह वैधता की समीक्षा कर सकती है जो एक प्रक्रियात्मक समीक्षा थी।

कोर्ट ने माना कि एचपीसी को व्यक्ति के रेकॉर्ड की संपूर्णता को ध्यान से देखना था तथा इस बात पर विचार करना था कि क्या उम्मीदवारकेन्द्रीयसतर्कताआयुक्तकेरूपमेंकार्यकरनेमेंसक्षमहोगा कि नहीं। इसको यह भी जाँच करनी चाहिए कि यदि लंबित कार्यवाही की वजह से "संस्थागतयोग्यता" सेसमझौताकियागया है। कोर्ट ने पाया कि एचपीसी जरूरी दस्तावेज़ जैसे पी जे थॉमस के खिलाफ एफ़आईआर , नियंत्रकएवंमहालेखापरीक्षकद्वारा कही गई बातें, तथा साथहीडिपार्टमेंट ऑफ पेरसोनल एंड ट्रेनिंग द्वारानोट कीगईबातें देख पाने में विफल हुई है। इसलिए , सुप्रीम कोर्ट ने एक घोषणापत्र रिट याचिका तैयार की जिसमें कहा गया कि यह सिफ़ारिश कानून में गैर या सही नहीं थी।

रिटयाचिकाओं के विषय में अनुबंध मामले

ज़ोनल मैनेजर, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बनाम देवी इस्पात लिमिटेड और अन्य, 2011 (1) ALD 22 (SC)

इस मामले में, प्रतिवादी कंपनी अपीलकर्ता बैंक में एक खाता चला रही थी , तथा इसके लिए उसे कई प्रकार की क्रेडिट सुविधायें प्राप्त थी, जैसे मियादी ऋण और सक्रिय पूँजी डिमांड लोन। कुछ अनियमतताएँ पता चलने पर, बैंक ने कंपनी को किसी दूसरे बैंक में खाता ट्रान्सफर करने को कहा। अपीलकर्ता बैंक कई सिक्योरिटी दस्तावेजों, जैसे फैक्टरीपरिसरके टाइटल दस्तावेजों की मूल प्रति और प्रतिवादी की सभी समर्थक प्रतिभूतियों का धारक (होल्डर) था। कंपनी ने दूसरे बैंक में अपना खाता ट्रान्सफर करवा लिया तथा अपीलकर्ता बैंक को ये सभी दस्तावेज़ नए बैंक को सौंपने के लिए अनुरोध किया। अपीलकर्ता बैंक ने ऐसा करने से मना कर दिया तथा कंपनी के खिलाफ कुछ लेन -देन के चलते धोखेबाज़ी का मामला दर्ज करवाया।

कंपनी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की गई तथा अदालत ने बैंक को उक्त दस्तावेजों को छोड़ देने के निर्देश दिये। उच्च न्यायालय की डिविजन बेंच ने इस फैसले को बरकरार रखा। सुप्रीम कोर्ट के समक्ष यह मुद्दा था कि क्या दो पक्षों के बीच एक अनुबंध के लिए सिक्योरिटी दस्तावेज़ एक रिट याचिका का विषय हो सकते है।

कोर्ट के अनुसार, कानून में यह तय किया गया है कि एक अनुबंध के नियमों और शर्तों के मतलब से हुए विवाद को संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक याचिका में नहीं उठाया जा सकता। हालांकि , अनुच्छेद 12 के तहत अपीलकर्ता बैंक एक राज्य है तथा "यदि राज्य के दस्तावेज़ सार्वजनिक भलाई और लोक हित के विपरीत काम करते है, इसके अनुबंधयावैधानिकदायित्वमें भारतीय संविधान के अनुच्छेद 12 का गलततरीकेसे, अन्याय से, अनुचितरूपसेभेदभावपूर्ण और उल्लंघन करते है, तो रिट याचिका समर्थनीय है।"

सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया कि हम मानते है कि रिट ऑफ मैंडमस को टाइटल दस्तावेजों को लौटाने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा उचित रूप से जारी किया गया था।

राहत को नई दिशा देने का अधिकार

एम सुधाकर बनाम वी मनोहरन, (2011) 1 SCC 484

अपीलकर्ता-याचिकाकर्ता तमिलनाडु में एक विशेष ट्रस्ट के सदस्य थे तथा दो सत्रों के लिए इसके अध्यक्ष निर्वाचित किए गए थे। 2007 में, उक्त ट्रस्ट की जनरल बॉडी के एक प्रस्ताव द्वारा उनपर 10 सालों के लिए किसी भी पद पर आसीन होने पर रोक लगा दी। इस प्रस्ताव को बाद में राज्य सरकार में सक्षम अधिकारी द्वारा रजिस्टरीकृत करने हेतु भेज दिया गया। अपीलकर्ता ने मदुरै उच्च न्यायालय की मदुरै बेंच के समक्ष लगातार कई रिट याचिकाएं लगाई। इनमे से पहली याचिका ने सरकार को बोर्ड के प्रस्ताव का रजिस्टरीकरण रोकने के निर्देश की माँग की। इसमे आधार यह था कि लागू उपनियम किसी भी प्रस्ताव को एक व्यक्ति को ऑफिस संभालने से रोक नहीं सकते।

सभी याचिकाओं पर एक साथ सुनवाई पर , सिंगल जज ने महसूस किया कि प्रस्ताव को पहले से ही रजिस्ट्रीकृत कर दिया गया था और इससे यह आदेश को निष्फल कर देगा। लेकिन कोर्ट ने याचिकाकर्ता के लाभ हेतु राहत में नए निर्देश दिये। सिंगल जज ने प्रस्ताव को इस आधार पर अवैध घोषित किया कि उपनियम ऐसे प्रस्ताव की अनुमति नहीं देते। डिविजन बेंच के समक्ष अपील करने पर , प्रस्ताव के खिलाफ अभिवेदन करने में देरी तथा एक सवाल , जो इसके समक्ष नहीं है , पर फैसला देने की कोर्ट की अयोग्यता के आधार पर फैसले को उलट दिया गया।

सुप्रीम कोर्ट ने इस मत को गलत पाया। सुप्रीम कोर्ट कानून के इस मत पर राजी हुआ कि रिट न्यायिक अधिकार क्षेत्र के तहत उच्च न्यायालयों के पास राहत में नए निर्देश देने का अधिकार था। मामले के तथ्यों के आधार पर कोर्ट न्याय के हितों की सेवा के लिए ऐसा कर सकती है। सुप्रीम कोर्ट ने सिंगल जज द्वारा दी गई राहत के साथ कुछ भी गलत नहीं पाया तथा मद्रास उच्च न्यायालय की डिविजन बेंच के आदेश को रद्ध कर दिया।

राजिन्दर नगर वेलफ़ेयर एसोसिएशन बनाम दिल्ली जल बोर्डऔर अन्य, MANU/DE/0713/2011 (दिल्ली उच्च न्यायालय)

याचिकाकर्ता एसोसिएशनने दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष इस शिकायत के साथ रिट याचिका दायर की कि प्रतिवादी पानी के मीटर लगाने का अपना वैधानिक कर्तव्य नहीं निभा रहा था। इसके विपरीत इसने 20 अक्टूबर 2009 को सभी उपभोक्ताओं को एक महीने के अंदर सक्रिय पानी के मीटर लगाने का नोटिस जारी किया। याचिककर्ताओं ने उक्त फैसले को रद्ध करवाने के लिए रिट ऑफ सेर्टायारी लगाई , तथा दिल्ली में सभी उपभोक्ताओं के यहाँ पानी के मीटर लगाने , एवं भविष्य में पानी इकट्ठा करने और पानी के मीटर की किसी भी प्रकार की कमी को रोकने हेतु बोर्ड को निर्देश देने के लिए,तथा उपभोक्ता के खिलाफ कठिन कार्यवाही करने से रोकने के लिए रिट ऑफ मैंडमस लगाई।

दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष अहम सवाल यह था कि क्या सभी उपभोक्ताओं के लिए पानी के मीटर लगाने का दायित्व बोर्ड का है। अदालत ने जनहित याचिकाओं के कई पूर्व उदाहरणदेखे। उनके आधार पर इसने माना कि "अदालत की एक अहम भूमिका थी और इसके पास किसी भी याचिका के संदर्भ में , जिसमे विरोधात्मक भाव नहीं है , में राहत में नए निर्देश देने का अधिकार है ... कई बार इसे अनुच्छेद 226 के तहत अदालत के कर्तव्य के तौर पर माना गया हैयह देखने के लिए कि राज्य की शासन प्रणाली में सत्यनिष्ठा तथा नैतिकता बरकरार है।"

1998 के दिल्ली जल बोर्ड एक्ट की धारा 15 और 17 को ध्यानपूर्वक देखते हुए , अदालत ने निष्कर्ष निकाला कि वास्तव में घरेलू और कुछ स्थतिओं में अन्य उद्देश्यों के लिए पानी की आपूर्ति बोर्ड की ज़िम्मेदारी थी, तथा उपभोक्ता को केवल पाइपलाइन की देखरेख करनी थी।इस तरह अदालत ने मीटर लगाने के 'प्रयास' के निर्देश दिये ", और किसी भी हालत में यदि यह ऐसा नहीं कर सकता तो इसे उपभोक्ताओं द्वारा मीटर लगाने के लिए उपलब्ध ब्रांड तथा स्टैंडर्ड के बारे में सूचित करना होगा।

ECONET

Centre for Social Justice

Lawyers
for Change

CENTRE FOR SOCIAL JUSTICE
C-106, Royal Chinmay, Opp. ICO Pump,
Next to Simandhar Tower, Off Judges' Bungalow Road,
Bodakdev, Vastrapur, Ahmedabad – 380054 Gujarat INDIA
socjust@gmail.com | www.centreforsocialjustice.net